



ए.एफ.आर.

सुरक्षित रखने की तिथि:- 30.01.2026

निर्णय की तिथि:- 13.02.2026

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

लखनऊ

धारा 482 के अंतर्गत आवेदन संख्या - 5062 वर्ष 2016

शिव प्रताप उर्फ जोखू

.....आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य

.....विपक्षीगण

---

आवेदक के अधिवक्ता : रणविजय सिंह

विपक्षीगण के अधिवक्ता : सरकारी अधिवक्ता, अमरेश सिंह, शीतला प्रसाद त्रिपाठी

---

**न्यायालय संख्या - 23**

**माननीय राजीव भारती, न्यायमूर्ति**

1. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री रणविजय सिंह, विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री एस पी त्रिपाठी, अपर शासकीय अधिवक्ता श्री एस के पांडे को सुना और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

2. दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) की धारा 482 के तहत इस आवेदन के माध्यम से, आवेदक ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अंबेडकर नगर द्वारा 28/03/2014 को पारित आदेश, जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



संहिता की धारा 155(2) के तहत अनुमति दी गई थी, 10/06/2015 की आरोप पत्र (चार्जशीट) और 21/11/2015 के समन आदेश को रद्द करने की प्रार्थना की है, जो पुलिस स्टेशन- सम्मानपुर, जिला- अंबेडकर नगर में भारतीय दंड संहिता की धारा 352, 504 और 427 के तहत दर्ज एनसीआर संख्या 30/2014 से उत्पन्न हुए हैं।

### मामले के तथ्य

3. 26/03/2014 को एक एनसीआर दर्ज की गई थी, जिसके बाद शिकायतकर्ता ने मामले की जांच के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत अनुमति मांगने हेतु विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया। विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने 28/03/2014 को आवेदन स्वीकार कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप जांच की गई और आरोप पत्र दाखिल किया गया, जिस पर संज्ञान लिया गया और आवेदक को तलब किया गया।

### आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुति

4. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री रणविजय सिंह का तर्क है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के अंतर्गत, जांच की अनुमति केवल पुलिस अधिकारी द्वारा ही मांगी जा सकती थी। चूंकि आवेदन शिकायतकर्ता द्वारा दायर किया गया था, इसलिए विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दी गई अनुमति अवैध है। परिणामस्वरूप, संपूर्ण जांच और उसके बाद की कार्यवाही दूषित हो जाती है।

अस्वीकरण:-अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



5. नवीन चंद्र पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1995 All LJ 1688 में रिपोर्ट किए गए मामले पर भरोसा किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया है।

"3. कॉग्निज़ेबल (संज्ञेय) और नॉन-कॉग्निज़ेबल (असंज्ञेय) अपराध के बीच मुख्य अंतर यह है कि पहले मामले में पुलिस मजिस्ट्रेट के किसी आदेश के बिना ही जांच शुरू कर देती है, जबकि नॉन-कॉग्निज़ेबल मामले में पुलिस जांच तभी शुरू कर सकती है जब मजिस्ट्रेट जांच करने की अनुमति देने वाला आदेश दे दे। इसलिए, आदेश प्राप्त करने की ज़िम्मेदारी पुलिस की होती है, न कि शिकायतकर्ता की।"

6. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने विजेश पिल्लई बनाम कर्नाटक राज्य मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय के निर्णय, जो 2023 लाइव लॉ (कर्नाटक) 229 में रिपोर्ट किया गया है, विशेष रूप से पैरा संख्या 19 और 20 पर भी भरोसा जताया है, जो निम्नानुसार हैं।

19. कर्नाटक आपराधिक व्यवहार नियम, 1968 का अध्याय V नियम 1 भी गैर-संज्ञेय मामले की जांच से संबंधित है। उक्त प्रावधान इस प्रकार है:-

### **"जांच और अभियोजन"**

\*1. धारा 154 के अंतर्गत रिपोर्ट - (1) संहिता की धारा 154 के तहत पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट प्राप्त होने पर, मजिस्ट्रेट रिपोर्ट पर उसकी प्राप्ति की तारीख और समय का नोट बनाएंगे और

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



उस पर आद्याक्षर करेंगे। आद्याक्षर करने से पहले, मजिस्ट्रेट रिपोर्ट पर यह भी पृष्ठांकन करेंगे कि वह डाक द्वारा प्राप्त हुई है या मुद्दाम।

2. (1) जब कोई मजिस्ट्रेट कोड की धारा 155(2), 156(3) या 202 के तहत किसी मामले की जांच का निर्देश देता है, तो वह अपने आदेश में उस पुलिस अधिकारी या उन पुलिस अधिकारियों का पद और ओहदा बताएगा जिनके द्वारा जांच की जाएगी।

20. इसलिए, नियम 1 के तहत, मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट पर यह लिखना होगा कि वह डाक से मिली है या मुद्दाम (विशेष वाहक) के ज़रिए। नियम 2 के तहत, मजिस्ट्रेट को अपने आदेश में उस पुलिस अधिकारी का पद और ओहदा बताना होगा जो जांच करेगा। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(1) और (2) और कर्नाटक क्रिमिनल रूल्स ऑफ़ प्रैक्टिस के चैप्टर V के नियम 1 और 2 की ज़रूरी शर्तों को ध्यान में रखते हुए, यह कोर्ट राज्य में काम कर रहे ज्यूडिशियल मजिस्ट्रेट की मदद के लिए नीचे दी गई गाइडलाइंस तय करता है।

i) अधिकार-क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट अब पुलिस की रिक्वेस्ट पर 'अनुमति प्राप्त' जैसा कोई भी नोट या टिप्पणी नहीं लिखेंगे। कानून की नज़र में और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत, ऐसी टिप्पणी को कोई आदेश नहीं माना जाता है।

ii) जब सूचना देने वाला संबंधित मजिस्ट्रेट को अनुरोध-पत्र सौंपता है, तो मजिस्ट्रेट को उस पर यह नोट करना चाहिए कि वह कैसे प्राप्त हुआ (डाक से या मुद्दाम/वाहक द्वारा) और कार्यालय को निर्देश देना चाहिए कि इसे एक अलग ऑर्डर शीट के साथ उनके सामने पेश किया जाए। अनुरोध-

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



पत्र पर ही कोई आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए। मामले की आगे की कार्यवाही के लिए उसी ऑर्डर शीट का उपयोग किया जाना चाहिए।

iii) जब संबंधित मजिस्ट्रेट के पास अनुरोध-पत्र जमा किया जाता है, तो उन्हें सबसे पहले यह जांचना होता है कि क्या पुलिस स्टेशन के एसएचओ ने सूचना देने वाले को उस अनुरोध-पत्र के साथ उनके पास भेजा है।

iv) अधिकार-क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट को अपनी समझ-बूझ से अनुरोध की बातों की जाँच करनी चाहिए और यह तय करना चाहिए कि क्या यह मामला जाँच के लायक है या नहीं। अगर मजिस्ट्रेट को लगता है कि मामला जाँच के लायक नहीं है, तो वह अनुरोध में की गई माँग को खारिज कर देंगे। जब उन्हें यह पक्का यकीन हो जाए कि पुलिस अधिकारी को जाँच करने की इजाज़त देने का आधार मौजूद है, तभी वे इस बारे में अपना फैसला दर्ज करेंगे और पुलिस अधिकारी को गैर-संज्ञेय अपराध की जाँच करने की इजाज़त देंगे।

v) अगर मजिस्ट्रेट जांच की इजाज़त देने का आदेश देते हैं, तो उन्हें उस पुलिस अधिकारी का रैंक और पद बताना होगा जो मामले की जांच करेगा; यह अधिकारी सूचना देने वाले या शिकायतकर्ता से अलग होना चाहिए।

**विपक्षी पार्टी नंबर 2 के वकील और अपर शासकीय अधिवक्ता की ओर से दी गई दलीलें।**

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



7. इसके विपरीत, विपक्षी पार्टी नंबर 2 के अधिवक्ता और अपर शासकीय अधिवक्ता ने 'ब्रिज लाल भार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (प्रमुख सचिव के माध्यम से)' मामले में दिए गए फैसले (जो 2006 (4) ALJ 731 में दर्ज है) का हवाला दिया, जिसमें इस कोर्ट ने यह कहा है।

"6. अब मैं दूसरे मुद्दे पर बात करता हूँ। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155 के प्रावधानों के अनुसार, केवल संबंधित पुलिस स्टेशन का इंचार्ज या कोई पुलिस अधिकारी ही नॉन-कॉग्निजेबल मामले (जिसमें पुलिस बिना वारंट के गिरफ्तार नहीं कर सकती) की जांच के लिए संबंधित मजिस्ट्रेट से आदेश लेने के लिए आवेदन कर सकता है; और शिकायतकर्ता द्वारा ऐसा आवेदन करने पर कोई कानूनी रोक नहीं है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) में यह भी कहा गया है कि कोई भी पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के 'आदेश' के बिना नॉन-कॉग्निजेबल मामले की जांच नहीं करेगा। यहाँ 'आदेश' शब्द का जिक्र है, जो दूसरे मुद्दे पर विचार करने के लिए जरूरी है; धारा 155(2) के प्रावधानों में 'बिना आदेश' शब्द का इस्तेमाल किया गया है। इसलिए, संबंधित पुलिस अधिकारी या पहली बार सूचना देने वाले व्यक्ति की अर्जी पर संबंधित मजिस्ट्रेट आदेश जारी कर सकते हैं। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के प्रावधानों के अनुसार, किसी संज्ञेय अपराध के होने की जानकारी पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को दिए जाने पर मामला दर्ज किया जाता है। अगर ऐसा नहीं होता है, तो पहली बार सूचना देने वाला व्यक्ति जांच का 'आदेश' पारित करवाने के लिए धारा 156(3) के तहत अर्जी दे सकता है; यह प्रावधान उसे अर्जी देने का अधिकार देता है। इसी आधार पर, पहली बार सूचना देने वाला व्यक्ति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत भी अर्जी देने के लिए सक्षम व्यक्ति है।"

### विश्लेषण

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं की दलीलें सुनने के पश्चात, निर्धारण हेतु निम्नलिखित प्रश्न तैयार किया गया है:-

(i) क्या शिकायतकर्ता या पीड़ित व्यक्ति द्वारा दिए गए आवेदन पर मजिस्ट्रेट द्वारा गैर-संज्ञेय मामले की जांच के लिए सीआरपीसी की धारा 155 (2) के तहत अनुमति दी जा सकती है?

9. उपरोक्त न्यायिक निर्णयों के अवलोकन के पश्चात, इस न्यायालय ने CrPC की धारा 155 (2) के वैधानिक प्रावधान का अवलोकन किया, जिसे संदर्भ हेतु यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।

**"155. गैर-संज्ञेय मामलों और उनकी जांच के बारे में जानकारी। - (1) जब किसी पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को उस स्टेशन की सीमा के भीतर किसी गैर-संज्ञेय अपराध के होने की सूचना दी जाती है, तो वह उस सूचना का सार एक ऐसी किताब में दर्ज करेगा या करवाएगा जिसे वह अधिकारी राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में निर्धारित किए गए प्रारूप में रखेगा, और सूचना देने वाले को मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा।"**

**(2) कोई भी पुलिस अधिकारी ऐसे मामले की सुनवाई करने या मामले को विचारण के लिए सुपुर्द करने की शक्ति रखने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना, किसी असंज्ञेय मामले की जांच नहीं करेगा।**

**(3) ऐसा आदेश पाने वाला कोई भी पुलिस अधिकारी जांच के संबंध में उन्हीं शक्तियों का इस्तेमाल कर सकता है (सिवाय बिना वारंट के गिरफ्तार करने की शक्ति के) जिनका इस्तेमाल किसी संज्ञेय अपराध के मामले में पुलिस थाने का प्रभारी अधिकारी कर सकता है।**

अस्वीकरण:-अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(4) जहाँ कोई मामला दो या अधिक अपराधों से संबंधित हो, जिनमें से कम से कम एक संज्ञेय हो, तो उस मामले को संज्ञेय मामला माना जाएगा, भले ही अन्य अपराध असंज्ञेय हों।

10. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के अनुसार, "कोई भी पुलिस अधिकारी ऐसे मामले की सुनवाई करने या मामले को सुनवाई के लिए भेजने का अधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी गैर-संज्ञेय मामले की जांच नहीं करेगा"। यह प्रावधान जांच की शक्ति को सीमित करता है, लेकिन यह उस व्यक्ति को निर्दिष्ट नहीं करता है जो मजिस्ट्रेट से संपर्क कर सकता है। **नवीन चंद्र पांडे (उपरोक्त)** मामले में यह माना गया था कि पुलिस मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी गैर-संज्ञेय मामले की जांच नहीं कर सकती। ऐसी अनुमति प्राप्त करना पुलिस की ज़िम्मेदारी है, हालांकि, यह निर्णय यह नहीं कहता है कि शिकायतकर्ता मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन करने से वंचित है। **ब्रिज लाल भार (उपरोक्त)** मामले में, बाद की समक्ष पीठ ने माना कि प्रथम सूचनाकर्ता के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत आवेदन करने पर कोई कानूनी रोक नहीं है। मजिस्ट्रेट पुलिस या सूचनाकर्ता के आवेदन पर आदेश पारित कर सकते हैं, प्रावधान केवल मजिस्ट्रेट के आदेश की आवश्यकता रखता है, न कि किसी विशिष्ट आवेदक की।

11. उपर्युक्त दोनों निर्णय समान पीठों द्वारा दिए गए हैं। यह एक स्थापित सिद्धांत है कि समान क्षमता वाली पीठ, समान स्तर की पीठ के निर्णय से बाध्य होती है। हालांकि, मतभेद होने की स्थिति में, आमतौर पर बाद वाले निर्णय का पालन किया जाना चाहिए, जब तक कि मामले को बड़ी पीठ के पास न भेजा जाए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के '**बिहार राज्य बनाम कालिका कुएर उर्फ कालिका सिंह व अन्य**' (2003) 5 एससीसी 448 और '**भारत संघ व अन्य बनाम रघुबीर सिंह (मृतक) उनके कानूनी उत्तराधिकारियों के माध्यम से**' (1989) 2 एससीसी 754 के फैसलों का संदर्भ अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



लिया जा सकता है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि न्यायिक अनुशासन के लिए निश्चितता और एकरूपता आवश्यक हैं। चूंकि **बृज लाल भार (उपरोक्त)** के बाद के निर्णय में वैधानिक योजना की विस्तार से जांच की गई है और कानूनी स्थिति स्पष्ट की गई है, इसलिए यह न्यायालय सम्मानपूर्वक उसका पालन करता है।

12. **विजेश पिल्लई (उपरोक्त)** मामले में आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई निर्भरता गलत है, क्योंकि उक्त नियम 'कर्नाटक क्रिमिनल रूल्स ऑफ़ प्रैक्टिस, 1968' पर आधारित हैं, जिनका उत्तर प्रदेश राज्य में कोई अनुप्रयोग नहीं है। उत्तर प्रदेश राज्य में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत केवल यह आवश्यकता है कि मजिस्ट्रेट अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करें और जांच की अनुमति देने का आदेश पारित करें। कर्नाटक क्रिमिनल रूल्स ऑफ़ प्रैक्टिस, 1968 के तहत बताई गई प्रक्रियात्मक औपचारिकताओं का पालन करने की कोई कानूनी ज़रूरत नहीं है। उत्तर प्रदेश राज्य में कर्नाटक क्रिमिनल रूल्स ऑफ़ प्रैक्टिस, 1968 के बराबर कोई खास नियम नहीं हैं।

13. माननीय सुप्रीम कोर्ट ने बार-बार यह कहा है कि जांच से जुड़े प्रक्रियात्मक प्रावधानों की व्याख्या न्याय को आगे बढ़ाने के लिए की जानी चाहिए, न कि वैध अभियोजन को बाधित करने के लिए।

14. **'सकीरी वासु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य' (2008 (2) एससीसी 409)** मामले का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया है कि मजिस्ट्रेट के पास उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए व्यापक शक्तियां हैं। यह निर्णय इंगित करता है कि प्रक्रियात्मक तकनीकीताओं के आधार पर कार्यवाही को तब तक अमान्य नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि अधिकार क्षेत्र की अवैधता या न्याय की विफलता सिद्ध न हो जाए।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



15. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) केवल पुलिस अधिकारी पर रोक लगाती है और यह शिकायतकर्ता को मजिस्ट्रेट के पास जाने से नहीं रोकती है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के प्रावधान का मकसद जांच पर न्यायिक निगरानी सुनिश्चित करना है, न कि न्याय पाने के रास्ते में रुकावट डालना। एक बार जब मजिस्ट्रेट ने अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल करके अनुमति दे दी है, तो उसके आधार पर की गई जांच को केवल इसलिए गैर-कानूनी नहीं माना जा सकता क्योंकि आवेदन शिकायतकर्ता ने दिया था।

16. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दखल तभी ज़रूरी है जब कार्यवाही अधिकार-क्षेत्र से बाहर हो, प्रक्रिया का दुरुपयोग हुआ हो, या कार्यवाही जारी रखने से न्याय में बाधा आए। मौजूदा मामले में ऐसी कोई स्थिति नहीं है। इस मामले में उठाया गया मुद्दा पूरी तरह से तकनीकी है और इससे मजिस्ट्रेट के अधिकार-क्षेत्र पर कोई असर नहीं पड़ता है।

17. **बृज लाल भार (उपरोक्त)** मामले में तय किए गए कानून और न्यायिक अनुशासन के स्थापित सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, यह कोर्ट मानता है कि शिकायतकर्ता या किसी पीड़ित व्यक्ति की अर्जी पर मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 155(2) के तहत अनुमति दे सकते हैं, और इसके आधार पर की गई जांच अमान्य नहीं होती है।

18. ऊपर बताई गई वजहों को देखते हुए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत इस अर्जी में दखल देने का कोई आधार नहीं बनता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दी गई अर्जी को इसके ज़रिए **खारिज** किया जाता है। अगर कोई अंतरिम आदेश था, तो उसे रद्द किया जाता है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(राजीव भारती, न्यायमूर्ति)

आदेश दिनांक- 13.02.2026

आनंद

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:-अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।